बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का मकड़जाल एक नये प्रकार का साम्राज्यवाद है

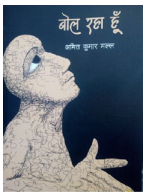

पुस्तक समीक्षा : बोल रहा हूँ
लेखक : अमित कुमार मल्ल
प्रकाशक : बोधि प्रकाशक, जयपुर
मूल्य : रु. 120/-
समीक्षक : डॉ. राकेश शुक्ल, एसोसिएट
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, वी.एस.एस.डी. कॉलेज, कानपुर

अमित कुमार मल्ल की कविताएं अपने समय की जटिल वास्तविकताओं, सूक्ष्म अनुभूतियों एवं संवेदनाओं को प्रकट करने में सक्षम हैं। सामान्यत: उन्होंने छोटी कविताएं लिखी हैं पर जहाँ विचार, चिन्तन, एवं अनुभूतियों की व्यापकता को समेटने में कवि अपने को असमर्थ पाता है वहाँ उसे लम्बी कविता की आवश्यकता पड़ी है। 'बोल रहा हूँ' शीर्षक कविता ऐसी ही कविता है जिसे पढ़ते हुए प्रत्येक पाठक से संवाद करने लगता है। एक ऐसा स्वाद जो उसे अर्न्तद्वन्द से आत्मसंघर्ष तक ले जाता है। एक शाश्वत प्रश्न यह कि आखिर प्रत्येक युग में युद्ध करने के लिए मनुष्य अभिशप्त क्यों हुआ? एक रूपक के माध्यम से कवि ने पाठकों की अन्तर्चेतना और पराक्रमी राणा प्रताप के बीच का संवाद दिखाया है। 'शांति चाहिए/ कि यह/ संघर्ष चाहिए/ कि सांमजस्य/ गुलाम चाहिए/ कि आज भी यह प्रश्न, यह द्वन्द हमें झकझोर रहा है। यह अलग बात है कि संदर्भ बदल गए हैं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के मकडजाल में हमें एवं नई तरह की गूलामी में जकड़ने का कार्य किया है। यह भी एक तरह का साम्राज्यवाद है। कवि के शब्दों में 'यह द्वन्द/ काल्पनिक नहीं है। साम्राज्यवाद से/ उसकी सेना से / उसके संसाधनों से / उसके उन्नत हथियारों से/ संघर्ष/ चल रहा है।' और यहीं एक निष्कर्ष भी इस कविता से निकलता है। 'राणा प्रताप व्यक्ति नहीं/ विचार हैं/ मेवाड की/ अस्मिता के/ स्वाभिमान के/ संघर्ष के प्रतीक हैं।'

कोई भी रचना अपने सर्जक के परिवेश, उसकी संवेदना और उसकी भाषा के संयोजन से प्रस्फुटित होती है अत: पुराआरण्यों को आज के संदर्भ में आज के निकष पर परखे बिना रचनाकार का दायित्व पूरा नहीं हो सकता। संग्रह की अनेक कविताएं आधुनिकताबोध परिस्थितियों एवं मान्यताओं को हमारे सामने रखती हैं जिनमें अच्छी तरह दिखाया गया है। कृत्रिम और नकली जीवन जीने वालों पर 'दोरंगा' कविता प्रहार करती है। हम सबने अपने-अपने चेहरों पर जो नकाब पहना हुआ है उसका प्रतिकार है यह कविता। इसी तरह एक कविता है 'मैं लोग नहीं हूँ' तपती धूप, सर्द ठंडक और जमाने के अंधड ने जहाँ अधिकांश लोगों के हृदयों को मरुस्थल मे तब्दील कर दिया है, वहाँ प्रेम और संवेदना की कुछ बूंदे अभी शेष हैं, जिसने जीवन के प्रति हमारी आस्था को बनाये रखा है।

शायद ही कोई समकालीन कवि होगा जिसने लोकतंत्र पर कविता न लिखी हो। यह सच है कि आजादी और लोकतंत्र का जैसा मजाक आज बनाया जा रहा है वैसा पहले कभी नहीं हुआ। मल्ल जी भी भला चुप क्यों रहते? आजादी के इतने वर्षों बाद भी लोकतांत्रिक व्यवस्था ने आम आदमी के सपनों को पूरा नहीं किया कारण, व्यवस्था के उत्तरदायी अधिकांश लोग छल, छद्म और भ्रष्टाचार में बिकाऊ। 'जो बिकता है, वही अच्छा है' की तर्ज पर लोकतंत्र भी बिकाऊ हो गया है। किसी उत्पाद की तरह। और उसे बेचने के लिए किस्म-किस्म के नेता, अभिनेता, नेत्रियाँ, अभिनेत्रियाँ विज्ञापन करने को तैयार।

संग्रह की अनेक कविताएँ जहाँ सामाजिक दायित्व बोधा से अनुघृणित है तो अनेक में लोक जीवन के प्रति सत्प्रक्ति का भाव है। अपने गाँव, खेत, वन, वाटिका, ताल, पोखर, के साथ पशु, पक्षी, चिरई, चुनमुन के प्रति रागात्मक अभिचेतना के दर्शन भी इन कविताओं में होते हैं। कुल मिलाकर एक सांस्कृतिक अनुषंग इन कविताओं को मोहक स्वर प्रदान करता है। मेरा गाँव और गौरेया आदि ऐसी ही कविताएं हैं। गाँव के अनेक विम्ब कवि की अनुभव समृद्धि, संवेदनशीलता एवं सूक्ष्म पर्यवेक्षण क्षमता को दर्शाते हैं। लेकिन क्या आज का गाँव कवि की बाल स्मृतियों का गाँव रह गया है? 'गोइंठा की/ धीमी आंच को/ लिट्टी/ चोखा/' लेकिन अब 'गाँव में/ बिकने लगा/ चिप्स/ कोक/ मोबाइल/ इण्टरनेट।' गौरेया कविता बिल्कुल गौरेया की तरह चंचल और मासूम है। आदमियों की ओर छोर बढ़ती आबादी में पशु-पक्षियों का क्या काम? पर क्या पशु-पक्षी और पेड़-पौधों के बिना मनुष्य औश्र मनुष्यत्व का अस्तित्व रह जाएगा? यह विचारणीय है।

अमित कुमार मल्ल की कविताओं में विषय वैविध्य तो है ही, साधारण से साधारण विषयों में भी उनका चिन्तनबोध काबिले-तारीफ है। वैचारिकता और संवेदना इनकी भीतरी शक्ति है। 'रेलवे स्टेशन की पीली रोशनी', 'भगवान बुद्ध', 'प्यार करता हूँ', 'अकेलापन', 'पानी', 'तब भी नहीं टूटा', 'मिटाना' और 'मेरी सुनो' आदि संग्रह की महत्वपूर्ण कविताएं हैं। जिनमें जीवन-मूल्यों और मर्यादाओं से च्युत होते जा रहे समाज में जब आस्था-अनास्था का द्वन्द व्यक्ति को सर्वाधिक परेशान कर रहा हो तब सहज और उदात्त जीवन के अभिलाषी समाज को कवि ही राह दिखाता है।

कविताओं की भाषा सहज और सम्प्रेष्य है। अनेकश: आंचलिक शब्दों ने कविता के लालित्य में अभिवृद्धि की है। प्रयोगों और वक्रोक्तियों ने अनेक कविताओं को बहुस्तरीय बनाया है तौ अनेक कविताएँ बिल्कुल सपाट और इकहरी भी हैं। समग्रत: 'बोल रहा हूँ' समकालीन कविता विधा की एक महत्वपूर्ण कृति है।